National Journal of
Hindi & Sanskrit Research

**ISSN: 2454-9177**
**NJHSR 2026;** 1(65): 197-200
© 2026 NJHSR
www.sanskritarticle.com

**Akanksha Dwivedi**
Research Scholar,
Jamia Millia Islamia,
New Delhi

**Correspondence:**
**Akanksha Dwivedi**
Research Scholar,
Jamia Millia Islamia,
New Delhi

# जीवानन्दनम् नाटक में मानवीय मूल्य

**आकांक्षा द्विवेदी**

**सांराश:**
प्रस्तुत शोधपत्र में संस्कृत नाट्य परम्परा के अन्तर्गत रचित जीवानन्दनम् नाटक में निहित मानवीय मूल्यों का सम्यक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है। नाटककार ने मानव जीवन की गरिमा, उसके उद्देश्य तथा नैतिक अधिष्ठान को अत्यन्त प्रभावशाली ढङ्ग से प्रस्तुत किया है। इस अध्ययन में यह प्रतिपादित किया गया है कि मानव जीवन केवल भौतिक उपलब्धियों तक सीमित न होकर धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष की समन्वित साधना का माध्यम है। नाटक में निरूपित मानवीय मूल्यों- जैसे करुणा, कर्तव्यनिष्ठा, शौर्य, ज्ञान, वैराग्य एवं नेतृत्व- कौशल का विश्लेषण करते हुए यह बताया किया गया है कि ये मूल्य न केवल व्यक्तिगत जीवन को उन्नत बनाते हैं। अपितु सामाजिक समरसता और नैतिक व्यवस्था की स्थापना में भी सहायक होते हैं। साथ ही नाटक में शरीर की आरोग्यता, आन्तरिक शुद्धता तथा तप-प्रधान जीवन शैली को मानव विकास के आधार के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

**बीज शब्द:** मानवीय मूल्य, जीवानन्दनम्, संस्कृत नाटक, करुणा, कर्तव्यनिष्ठा, आत्मनिर्भरता, जीवन-दर्शन

संस्कृत नाट्यपरम्परा में मानवीय मूल्यों का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। जीवानन्दनम् नाटक में भी मानव जीवन की गरिमा, उद्देश्य तथा उसके नैतिक पक्ष का अत्यन्त सूक्ष्म और प्रभावशाली चित्रण किया गया है । नाटककार ने यह प्रतिपादित किया है कि मानव जीवन उच्च आदर्शों की प्राप्ति का सशक्त साधन है—

**प्राग्जन्मीयतपः फलं तनुभृतां प्राप्येत मानुष्यकं**
**तच्च प्राप्तवता किमन्यदुचितं प्राप्तुं त्रिवर्गं विना।**[1]

यहां प्रतिपादित किया गया है कि मनुष्य जन्म पूर्वजन्म के तप का फल है। अतः यह जीवन अत्यन्त दुर्लभ और मूल्यवान है। ऐसा जीवन प्राप्त होने पर मनुष्य को धर्म, अर्थ और काम की सिद्धि की ओर अग्रसर होना चाहिए। यही मानव जीवन का वास्तविक उद्देश्य है। यहाँ मानव जन्म को पूर्वसंचित तप का फल बताया गया है। यही भाव भगवद्गीता में भी प्रतिपादित है—

**मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चिद्यतति सिद्धये**[2]

नाटक में यह भी स्पष्ट किया गया है कि मानव जीवन की सफलता उद्देश्यों के साथ-साथ साधन में निहित है। शरीर ही सभी कर्मों का आधार है, अतः उसका स्वस्थ होना अनिवार्य है—

**तत्प्राप्तेरपि साधनं प्रथमतो देहो रुजावर्जित-**
**तेनारोग्यमभीप्सितं दिशतु वो देवः पशूनां पतिः।**[3]

इस भाव के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि निरोगता मानव जीवन का प्रथम आधार है। जब शरीर स्वस्थ रहता है, तब मनुष्य अपने कर्तव्यों का पालन सुचारु रूप से कर सकता है और अपने जीवन को उच्च आदर्शों की दिशा में ले जा सकता है। यहाँ शरीर को साधना का आधार माना गया है। यही विचार *तैत्तिरीयोपनिषद्* में भी निहित है —

**अन्नं ब्रह्मेति व्यजानात्**[4]

जीवानन्दनम् नाटक में मानवीय मूल्यों का चित्रण सैद्धान्तिक एवं व्यवहारिक है । नाटककार यह संकेत करता है कि प्रत्येक व्यक्ति को अपने जीवन को उद्देश्यपूर्ण बनाना चाहिए। जीवन में अनुशासन, संयम और कर्तव्यनिष्ठा का पालन आवश्यक है। यही गुण व्यक्ति को श्रेष्ठ बनाते हैं और समाज में उसकी प्रतिष्ठा स्थापित करते हैं। जीवानन्दनम् नाटक मानव जीवन की महत्ता, उसके उद्देश्य तथा उसके साधनों को अत्यन्त प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करता है। यहाँ मानव जीवन को एक अमूल्य अवसर के रूप में देखा गया है, जिसका सदुपयोग ही सच्चे मानवीय मूल्यों की स्थापना करता है।

जीवानन्दनम् नाटक में मानवीय मूल्यों का चित्रण मानव के आन्तरिक गुणों और उसके नैतिक आचरण को प्रमुखता देता है। नाटककार ने यह स्पष्ट किया है कि सभ्यता, तप और आन्तरिक शुद्धता से युक्त व्यक्ति ही समाज में वास्तविक सम्मान का अधिकारी होता है—

**विदधति तपोलभ्याः सभ्या इमे मम कौतुकं**
**तदिह हृदयं नाटयेथेनैतानुपासितुमोहते।**[5]

इस श्लोक के माध्यम से यह भाव व्यक्त होता है कि तप द्वारा प्राप्त उच्च गुणों से युक्त सज्जन व्यक्ति दूसरों के लिए आकर्षण का केन्द्र बनते हैं। उनका आचरण, उनकी विनम्रता और उनका आत्मसंयम समाज को प्रेरणा प्रदान करता है। ऐसे व्यक्तियों के प्रति स्वाभाविक श्रद्धा उत्पन्न होती है और उनके निकट रहने की इच्छा जाग्रत होती है। यहाँ तप से प्राप्त गुणों का महत्त्व प्रतिपादित है। इसी भाव को कठोपनिषद् में कहा गया—

**नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुना श्रुतेन**[6]

अर्थात् आत्मा केवल वचन या विद्या से नहीं, बल्कि साधना से प्राप्त होता है। *भगवद्गीता* में भी आन्तरिक शुद्धता को महत्व दिया गया—

**अमानित्वमदम्भित्वमहिंसा क्षान्तिरार्जवम्**[7]

नाटक में यह भी प्रतिपादित किया गया है कि मानव जीवन का वास्तविक सौन्दर्य आन्तरिक गुणों में निहित होता है। तप, संयम और सदाचार से युक्त व्यक्ति अपने जीवन को उच्च आदर्शों के अनुरूप ढालता है। यह आन्तरिक साधना ही उसे महान बनाती है। मानवीय मूल्य व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन को भी प्रभावित करते हैं। जब समाज में ऐसे सभ्य और संयमी व्यक्तियों की संख्या बढ़ती है, तब समग्र वातावरण में शान्ति, सौहार्द और नैतिकता का विकास होता है। इस प्रकार एक व्यक्ति का सद्गुण पूरे समाज के लिए प्रेरणा बनता है। मानव को अपने हृदय को शुद्ध और उदार बनाना चाहिए। केवल ज्ञान पर्याप्त नहीं होता, बल्कि उसके साथ आचरण की शुद्धता भी आवश्यक है। जब ज्ञान और आचरण में सामंजस्य स्थापित होता है, तभी वास्तविक मानवीय मूल्य प्रकट होते हैं। जीवानन्दनम् नाटक में स्पष्ट किया गया है कि तप, सभ्यता और सदाचार जैसे गुण ही मानव जीवन को श्रेष्ठ बनाते हैं। ये मूल्य व्यक्ति को ऊँचाई प्रदान करते हैं और समाज को एक सुदृढ़ नैतिक आधार प्रदान करते हैं। जीवानन्दनम् नाटक में मानवीय मूल्यों के अंतर्गत करुणा, कर्तव्यनिष्ठा और शौर्य का अत्यन्त संतुलित निरूपण प्राप्त होता है। नाटककार यह स्पष्ट करता है कि मानव का जीवन में समाज के प्रति उत्तरदायित्व की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। व्यक्ति का वास्तविक मूल्य उसके व्यवहार और उसके कर्मों से प्रकट होता है —

**न्यञ्च श्रद्धदातनोति समये नित्यादिकर्मत्रिकं**
**यद्दीनेषु दयां करोति समरे शौर्यं यदालम्बते।**
**तत्सर्वे नरसिंहयज्वसुततालाभस्य लीलायितम्॥**[8]

यहां मानव के तीन प्रमुख गुणों श्रद्धा, दया और शौर्य का उल्लेख हुआ है। जो व्यक्ति समय पर अपने नित्य कर्मों का पालन करता है, वह अनुशासन और धार्मिकता का परिचायक होता है। जो दीन-दुःखी लोगों के प्रति करुणा रखता है, वह सच्चे अर्थों में मानवता का पालन करता है। जो युद्ध अथवा संकट की स्थिति में शौर्य का आश्रय लेता है, वह साहस और आत्मबल का प्रतीक बनता है। नाटक में करुणा को अत्यन्त उच्च स्थान दिया गया है। करुणा ही वह भावना है जो मानव को दूसरों के दुःख से जोड़ती है और उसे सहायता के लिए प्रेरित करती है। जिस समाज में करुणा का अभाव होता है, वहाँ कठोरता और असंतुलन उत्पन्न होता है। करुणा से युक्त व्यक्ति समाज में सौम्यता और सहानुभूति का प्रसार करता है। श्रीमद्भगवद्गीता मे कहा गया है कि-

**अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च**[9]

कर्तव्यनिष्ठा भी मानवीय मूल्य का एक महत्वपूर्ण पक्ष है। अपने दायित्वों का समय पर और सम्यक् पालन करना ही सच्ची निष्ठा है। **स्वधर्मे निधनं श्रेयः**[10] ऐसा व्यक्ति विश्वसनीय बनता है और समाज में उसका सम्मान बढ़ता है। नाटककार यह संकेत करता है कि कर्तव्यपालन ही जीवन की स्थिरता और सफलता का आधार है। शौर्य का भी विशेष महत्त्व है। जीवन में अनेक प्रकार की चुनौतियाँ आती हैं। उन परिस्थितियों में धैर्य और साहस के साथ आगे बढ़ना ही शौर्य है। जीवन के प्रत्येक संघर्ष में इसकी आवश्यकता होती है। इस प्रकार जीवानन्दनम् नाटक में यह प्रतिपादित किया गया है कि श्रद्धा, दया और शौर्य जैसे गुण मानव जीवन को समग्र रूप से विकसित करते हैं। ये मूल्य व्यक्ति को उत्कृष्ट बनाते हैं और समाज में संतुलन एवं समरसता की स्थापना करते हैं। जीवानन्दनम् नाटक में मानवीय मूल्यों का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण पक्ष ज्ञान, वैराग्य और आत्मनिर्भरता के रूप में प्रकट होता है। नाटककार यह संकेत करता

है कि सच्चा ज्ञान वही है जो व्यक्ति को बाह्य आश्रयों से मुक्त कर आन्तरिक सामर्थ्य की ओर ले जाए। जब मनुष्य अपने भीतर स्थित शक्ति को पहचानता है, तब उसका व्यक्तित्व स्वाभाविक रूप से विकसित होता है —

**आनन्दरायमखिनो वाल्मीकेरिव योगिनः।**
**इतरापेक्षणात्सारः स्वतः सारस्वतोदयः॥**[11]

इस श्लोक में यह भाव व्यक्त किया गया है कि जैसे योगी वाल्मीकि के भीतर से स्वतः ज्ञान का उदय हुआ, उसी प्रकार सच्चा ज्ञान किसी बाहरी अपेक्षा पर निर्भर नहीं होता। वह व्यक्ति के अन्तःकरण से प्रकट होता है। यह आत्मप्रकाश ही मनुष्य को वास्तविक उन्नति की ओर ले जाता है। नाटक में यह भी दर्शाया गया है कि आत्मनिर्भरता मानव जीवन का एक महत्वपूर्ण मूल्य है। जो व्यक्ति अपने सामर्थ्य पर विश्वास करता है, वही कठिन परिस्थितियों में भी स्थिर रहता है। बाह्य साधनों पर अत्यधिक निर्भरता व्यक्ति को दुर्बल बनाती है, जबकि आत्मबल उसे सुदृढ़ बनाता है।

**न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते**[12]

ज्ञान के साथ-साथ वैराग्य का भी विशेष महत्व है। वैराग्य का अर्थ संसार से पलायन नहीं, बल्कि आसक्ति का त्याग है। जब व्यक्ति अपने कर्तव्यों का पालन करते हुए भी आसक्ति से मुक्त रहता है, तब वह संतुलित जीवन जीता है। यही संतुलन उसे मानसिक शान्ति प्रदान करता है। नाटककार यह भी इंगित करता है कि ज्ञान का उद्देश्य जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सम्यक् निर्णय लेने की क्षमता का विकास करना है। जब व्यक्ति का विवेक जाग्रत होता है, तब वह सही और गलत का भेद समझ पाता है और अपने जीवन को उचित दिशा में अग्रसर करता है। जीवानन्दनम् नाटक में ज्ञान, आत्मनिर्भरता और वैराग्य को मानवीय मूल्यों के रूप में अत्यन्त प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया गया है। ये मूल्य व्यक्ति को आन्तरिक रूप से सुदृढ़ बनाते हैं और उसे जीवन के उच्चतम आदर्शों की ओर अग्रसर करते हैं। जीवानन्दनम् नाटक में मानवीय मूल्यों का व्यापक स्वरूप नीति, प्रज्ञा और नेतृत्व-कौशल के रूप में भी अभिव्यक्त होता है। नाटककार यह दर्शाता है कि समाज और राज्य की स्थिरता के लिए केवल बल या पद पर्याप्त नहीं होता, बल्कि उसके लिए सूझबूझ, दूरदृष्टि और संतुलित विचार आवश्यक होते हैं। मानव के भीतर स्थित विवेक ही उसे सही निर्णय लेने की क्षमता प्रदान करता है-

**दुर्जाते सुमहत्यपि क्षितिपतेः शालीनतां संत्यज**
**शत्रुं जेतुमथेप्सितं घटयितुं शक्नोत्युपायेन यः।**
**प्रायो मन्त्रिपदं महोनतमतिः प्रासुं स एवार्हति**
**स्वोत्सेकी न तु पण्डितो भुवि जनो वाचा वदन् पौरुषम्॥**[13]

यहां प्रतिपादित किया गया है कि जो व्यक्ति उचित उपायों द्वारा कठिन कार्यों को सम्पन्न करने की क्षमता रखता है, वही उच्च पद के योग्य होता है। केवल वाणी में पराक्रम का प्रदर्शन करने वाला व्यक्ति वास्तविक नेतृत्व के योग्य नहीं होता। यहाँ नाटककार ने व्यावहारिक बुद्धि और कार्यकुशलता को अत्यन्त महत्त्व दिया है। नाटक में यह भी संकेत मिलता है कि किसी भी कार्य की सफलता के लिए विचारशीलता आवश्यक है। बिना सोचे-समझे किया गया कार्य प्रायः असफल होता है, जबकि विचारपूर्वक किया गया प्रयास सफलता की ओर ले जाता है। इसलिए श्रीमद्भगवद्गीता मे कहा गया है कि-

**विमृश्यैतदशेषेण यथेच्छसि तथा कुरु**[14]

परिस्थितियों के अनुरूप योजना बनाना और उचित समय पर निर्णय लेना ही सफलता का मूलमंत्र है। यह गुण किसी भी नेता या कर्ता के लिए अनिवार्य होता है।

**संचिन्तयामि कंचन संप्रति समयोचितं जयोपायम्।**
**येनास्माकं श्रेयो भविता सहसा पराजयो द्विषताम्॥**[15]

नाटककार ने मानवीय मूल्यों के अंतर्गत यह भी दर्शाया है कि व्यक्ति को अपने कार्यों में उत्तरदायित्व की भावना रखनी चाहिए। समाज, राष्ट्र और अपने कर्तव्यों के प्रति सजग रहना ही सच्चे नागरिक का लक्षण है। जब व्यक्ति अपने कर्तव्यों का ईमानदारी से पालन करता है, तब समाज में व्यवस्था और समृद्धि स्थापित होती है। जीवानन्दनम् नाटक में नीति, प्रज्ञा और नेतृत्व जैसे मानवीय मूल्यों का अत्यन्त प्रभावशाली चित्रण किया गया है। ये मूल्य समाज और राष्ट्र के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

**संदर्भ ग्रन्थ सूची**


1. **श्रीमद्भगवद्गीता –** गीता प्रेस सम्पादित, गीता प्रेस, गोरखपुर, पुनर्मुद्रण संस्करण, 2022।
2. **उपनिषद् संग्रह (ईश, कठ, मुण्डक, तैत्तिरीय आदि) –** स्वामी माधवानन्द, अद्वैत आश्रम, कोलकाता, 8वाँ संस्करण, 2018।
3. **नाट्यशास्त्रम् –** भरतमुनि, चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, 5वाँ संस्करण, 2016।
4. **संस्कृत नाट्य साहित्य का इतिहास –** डॉ. कपिलदेव द्विवेदी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 3रा संस्करण, 2015।
5. **भारतीय दर्शन –** डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, नवीन संस्करण, 2019।
6. **संस्कृत साहित्य का इतिहास –** आचार्य बलदेव उपाध्याय, चौखम्बा ओरिएण्टालिया, वाराणसी, 10वाँ संस्करण, 2017।
7. **काव्यप्रकाश –** मम्मट, चौखम्बा संस्कृत सीरीज, वाराणसी, षष्ठ संस्करण, 2014।

8. **धर्मशास्त्र का इतिहास** – पाण्डुरंग वामन काणे, भण्डारकर ओरिएण्टल रिसर्च इंस्टिट्यूट, पुणे, पुनर्मुद्रण, 2012।

9. **मनुस्मृति** – सम्पा. गंगानाथ झा, चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, चतुर्थ संस्करण, 2016।

10. **नीतिशतकम्** – भर्तृहरि, गीता प्रेस, गोरखपुर, पुनर्मुद्रण संस्करण, 2021।

**पाद टिप्पणी:**

[1]जीवानन्दनम् नाटकम् 1.2

[2]श्रीमद्भगवद्गीता 7.3

[3]जीवानन्दनम् नाटकम् 1.2

[4]तैत्तिरीयोपनिषद्

[5]जीवानन्दनम् नाटकम् 1.5

[6]कठोपनिषद् 1.2.23

[7]श्रीमद्भगवद्गीता 13.7

[8]जीवानन्दनम् नाटकम् 1.8

[9]श्रीमद्भगवद्गीता 12.13

[10]श्रीमद्भगवद्गीता 3.35

[11]जीवानन्दनम् नाटकम् 1.9

[12]श्रीमद्भगवद्गीता 4.38

[13]जीवानन्दनम् नाटकम् 1.29

[14]श्रीमद्भगवद्गीता 18.63

[15]जीवानन्दनम् नाटकम् 1.30